Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies
Online ISSN 2278-8808, SJIF 2024 = 8.153
https://www.srjis.com/issues_data/239
Peer Reviewed & Refereed Journal, SEPT-OCT 2024, Vol- 13/85

बौद्ध शिक्षा व्यवस्था स्वरूप और संस्थाएँः एक अध्ययन

अमिता रस्तोगी
(शोधार्थिनी)
डॉ. मृत्युंजय मिश्रा
असिस्टेंट प्रोफेसर, स्कूल ऑफ एजुकेशन, संस्कृति विश्वविद्यालय, मथुरा

Paper Received On: 20 SEPT 2024
Peer Reviewed On: 24 OCT 2024
Published On: 01 NOV 2024

Abstract

बौद्ध कालीन शिक्षा ने शांति शिक्षा के लिए व्यापक स्तर पर पाठ्यक्रम तैयार कर दिया। बुद्ध के अनुसार चार आर्य सत्य–दुःख है, दुःख का कारण है, दुःख का उपचार है एवं दुःख से मुक्ति है। इन्हीं दुखों का निरोध करने के लिये इन्होंने आठ आर्य सत्य या आष्टांगिक मार्ग बताए हैं– सम्यक दृष्टि, सम्यक संकल्पना, सम्यक वाक, सम्यक कार्य, सम्यक आजीव, सम्यक भाव, सम्यक स्मृति एवं सम्यक समाधि। इस दर्शन को ध्यान से देखें तो हम पाते है कि उन्होंने अतिशयवादिता को त्यागकर मध्यम मार्ग पर चलने का विचार दिया जिसमें जनमानस और लोक कल्याणकारी तत्वों का समावेश हो, बुद्ध के अनुसार जन्म–मृत्यु, संयोग–वियोग आदि सभी दुखमय हैं। तृष्णा या लालसा सम्पूर्ण दुखों का कारण है। तृष्णा के विरोध से दुख की निवृत्ति हो सकती है।

की–वर्डः *बौद्ध, शिक्षा, व्यवस्था, भिक्षु, मठ, विहार, सम्यक।*

परिचय

बौद्ध धर्म का विकास भारत में हुआ तथा यह गौतम बुद्ध के द्वारा प्रारंभ किया गया, जो शाक्य वंश के एक भारतीय राजकुमार थे। 600 ईसा पूर्व तक बौद्ध धर्म भारत में विस्तार तथा संघ के रूप में विकसित हो गया था। बौद्ध धर्म किसी विचार का अकस्मात प्रतिफल नहीं था। यह उस भारतीय चिंतन का एक प्राकृतिक क्रमिक विकास था जो समाज के प्राचीन भारतीय धर्म–दर्शन, सामाजिक तथा राजनीतिक परिदृश्य में अभिव्यक्त था। बौद्ध धर्म का प्रसार मठों तथा विहारो के माध्यम से हुआ, जहाँ भिक्षुओं द्वारा शैक्षिक गतिविधियाँ संपन्न की जाती थीं। संक्षेप में बौद्ध काल के दौरान शिक्षा का इतिहास इन मठों तथा विहारो से गहरे रूप से जुड़ा हुआ है, क्योंकि तब इन धार्मिक केन्द्रों के अतिरिक्त कोई भी स्वतंत्र शैक्षिक संस्थान अथवा केंद्र नहीं थे। इसके अतिरिक्त केवल भिक्षु अथवा सरमन ही लोगों को शिक्षा प्रदान करने के लिए अधिकृत थे। अतएव मठों और विहारों ने इसका स्थान ले लिया तथा परिणामस्वरूप यह स्थान

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

रहने के केंद्र के साथ–साथ सांस्कृतिक एवं शैक्षिक जीवन के केंद्र भी बन गए। बौद्ध शिक्षा का लक्ष्य व्यक्तिपरक के साथ–साथ सामाजिक भी था। व्यक्तिपरक लक्ष्य के अंतर्गत नैतिक चरित्र के विकास पर जोर दिया गया था। सामाजिक उद्देश्य के तहत संस्कृति को प्रोत्साहन प्रदान करना और सामाजिक दक्षता इसके केंद्र में थे। शिक्षा का उद्देश्य सांसारिक तथा व्यवहारिक ज्ञान का प्रसार था।[1]

बुद्ध ने आत्मिक क्लेश और अशान्ति के दमन के लिये मज्झिमा प्रतिपदा का मार्ग बताया और यह उपदेश दिया कि यह सांसारिक कार्य–कारणों में ही दुख है और इनका निराकरण भी सम्भव है इसलिए उन्होंने चार आर्य सत्यों (चत्वारि आर्य सत्यानि) का निरूपण किया जिसमें कहा कि यदि दुःख है, दुःख का कारण है, दुख का उपचार है, दुख से मुक्ति है। इन्हीं दुखों का निरोध करने के लिए उन्होंने आठ आर्य सत्य या आष्टांगिक मार्ग बताए है। जो आज अक्षरशः विश्व मानस पर सार्थक सिद्ध हो रहे हैं। हम इन्हीं मूल्यों को अपने पाठ्यक्रमों में अपना रहे हैं और आज भी यदि इन मूल्यों को जीवन में समाहित कर लें तो सम्भवतः दुःखों का निवारण हो सकता है। बुद्ध ने दुःख निवारण मार्ग में शील, समाधि और प्रज्ञा को निवारण का मार्ग बताया है।

1. सम्यक दृष्टि– अपने दृष्टिकोण को ठीक रखना चाहिये क्योंकि हमारा दृष्टिकोण जैसा होगा वैसा ही हमारा काम होगा तद्नुरूप उसका परिणाम भी वैसा ही निकलता है।

2. सम्यक संकल्प– हमारे संकल्प, विचार आसक्ति, द्वेष, तथा अहिंसा से मुक्त हो। गलत विचार एवं धारणाएं हमारे अन्दर न पनपने पायें। हमारे विचार पवित्र और शुद्ध हों।

3. सम्यक वाक्– हमें अप्रिय वचनों को बोलने से बचना चाहिये, बोलचाल ठीक नहीं रहने पर मनुष्य स्वयं तो दुःख पाता है और दूसरों को भी दुख देता है। अप्रिय वचनों का सर्वथा परित्याग ही सम्यक् वाक् है।

4. सम्यक् कर्मान्त– हमारे कार्य सम्यक हो। दान, दया, सत्य अहिंसा आदि सत्कर्मों का अनुसरण ही सम्यक् कर्मान्त है।

5. सम्यक् आजीविका– हमारी आजीविका के साधन ठीक होने चाहिये। सदाचार के नियमों के अनुकूल आजीविका के अनुसरण करने को सम्यक् आजीव कहा जाता है।

6. सम्यक व्यायाम (भाव)– किसी काम को करने के लिए हमारे प्रयत्न सही दिशा में होने चाहिये। नैतिक मानसिक एवं अध्यात्मिक उन्नति के लिए सतत् प्रयत्न करना ही सम्यक् व्यायाम है।

7. सम्यक स्मृति– मिथ्या भाव को त्याग कर मन, वचन तथा कर्मों को याद रखना और सच्ची धारणा रखना ही सम्यक् स्मृति है।

8. सम्यक समाधि– मन अथवा चित्त की एकाग्रता को सम्यक समाधि कहते हैं।

इन्हें ही आष्टांगिक मार्ग कहा जाता है। इस आष्टांगिक मार्ग से ही मोक्ष (निर्वाण) के सम्बन्ध में शिक्षा देने हेतु संघ बनाये गये बौद्धकालीन शिक्षा इन्हीं संघों तक सीमित थी तथा पूरी तरह प्रवृत्यात्मक थी।[2]

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

बुद्ध ने अपने विचारों को अतिगूढ़ रहस्यों से दूर रखा फलतः वे न तो तत्व मीमांसा के विवेचनों के चक्कर में पड़े और ना ही आत्मा परमात्मा उनकी धारणा थी, कि जिस तर्क के अकाट्य प्रमाण न तो उन तथ्यों से दूर ही रहना चाहिये, और उन्होंने शुभ अशुभ से हटकर जीव जगत ही सत्य है शेष सब मिथ्या है ऐसा कहकर बुद्ध ने स्वयं को नास्तिक की श्रेणी में खड़ा कर लिया यदि बुद्ध के उपदेशों और शिक्षा को ध्यान से देखें तो हम पायेंगे की उन्होंने आत्मा परमात्मा को नित्य नहीं मानते हुये, किसी ग्रन्थ को स्वतः प्रमाणित नहीं मानते हुये उन्होंने जीवन प्रवाह को सिर्फ शरीर तक ही नहीं स्वीकारा है और इन्हीं विचारों की नींव पर उन्होंने विश्व को एक नवीन क्रान्ति से अवगत कराया जिसमें विश्व शांति, विश्व बंधुत्व, शिक्षा शांति पूर्ण जीवन जीने के लिये और मानववाद प्रमुख है।[4]

बौद्ध धर्म का विकास मठों में हुआ था। ये मठ न केवल धर्म के वरन् शिक्षा के भी केन्द्र थे और शिक्षा देने का कार्य उनमें निवास करने वाले भिक्षुओं द्वारा किया जाता था। इन तथ्यों पर प्रकाश डालते हुए डॉ० आर० के० मुकर्जी ने लिखा है– ''बौद्ध मठ, बौद्ध–शिक्षा और ज्ञान के केन्द्र थे। बौद्ध–संसार अपने मठों से पृथक् या स्वतन्त्र रूप में शिक्षा प्राप्त करने का कोई अवसर नहीं देता था। धार्मिक और लौकिक, सब प्रकार की शिक्षा, भिक्षुओं के हाथ में थी।'' प्राचीन काल के समान बौद्ध काल में भी केवल प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा की व्यवस्था थी और शिक्षा के यही दो स्तर थे।[5]

प्राथमिक शिक्षा

प्राथमिक शिक्षा केवल बौद्ध धर्मावलम्बियों को ही नहीं, वरन् सब जातियों के बालकों को उपलब्ध थी। यह शिक्षा मठों में दी जाती थी और आरम्भ से पूर्णतया धार्मिक थी किन्तु जब कुछ समय के उपरान्त ब्राह्मणों ने प्रतिद्वन्द्वी शिक्षा–संस्थाएँ स्थापित करके उनमें लौकिक शिक्षा देनी आरम्भ कर दी, तब मठों में भी इस शिक्षा की व्यवस्था कर दी गई। पाँचवी शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री फाह्यान के लेखों में इस बात का उल्लेख मिलता है। सातवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री, आइसांग के अनुसार, प्राथमिक शिक्षा आरम्भ करने की आयु 6 वर्ष की थी। इस शिक्षा की अवधि साधारणतः 6 वर्ष की थी। सातवीं शताब्दी में भारत आने वाले चीनी यात्री हेनसांग प्राथमिक शिक्षा के पाठ्यक्रम का वर्णन इस प्रकार किया है–बालकों को प्रथम 6 माह में 'सिद्धिरस्तु' नामक बालपोथी पढनी पडती थी। इस पोथी में 12 अध्याय और वर्णमाला के 49 अक्षर थे, जिनको विभिन्न क्रम में रखकर 300 से अधिक श्लोकों की रचना की गई थी। 16 माह के बाद बालकों को अग्रांकित पाँच विद्याओं की शिक्षा दी जाती थी शब्द–विद्या, तर्क–विद्या, चिकित्सा–विद्या, अध्यात्म–विद्या और शिल्प–स्थान–विद्या। इस प्रकार पाठ्यक्रम में धार्मिक और लौकिक दोनों विषयों को स्थान दिया गया था। एलबर्ट फिटके के अनुसार, सामान्य शिक्षण विधि इस प्रकार थी– कि शिक्षक, लकड़ी की तख्ती पर वर्णमाला के अक्षरों को लिखता था और उनका उच्चारण करता था। बालक उसके उच्चारण का अनुकरण करते थे। इस प्रकार, जब कुछ समय के बाद उनको अक्षरों का ज्ञान हो जाता था, तब वे उनको लिखते थे। पाठ्य विषय के शिक्षण का अध्यापक आगे–आगे बोलता था और बालक उसके कथन को उस समय तक दोहराते थे जब तक उनको पाठ्य–विषय कण्ठस्थ

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

नहीं हो जाता था। इस प्रकार, शिक्षण विधि पूर्णतया मौखिक थी। मठ–विद्यालयों में शिक्षा का माध्यम, जनसाधारण की भाषा पाली थी न कि ब्राह्मणीय शिक्षालयों की संस्कृति।

उच्च शिक्षा

उच्च शिक्षा के द्वार सभी धर्मों और जातियों के बालकों के लिए खुले हुए थे। इस शिक्षा के प्रमुख केन्द्र – बौद्ध मठ थे, पर सब मठों में समान विषयों की शिक्षा नहीं दी जाती थी। इस शिक्षा की प्रशंसा में डॉ० ए० एस० अल्तेकर ने अग्रांकित शब्द लिपिबद्ध किये है–श्शमठों ने उच्च शिक्षा में अपनी दक्षता से कोरिया, चीन, तिब्बत और जावा जैसे सुदूर देशों के छात्रों को आकर्षित करके, भारत की अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति में वृद्धि की। उच्च शिक्षा का आरम्भ प्राथमिक शिक्षा समाप्त करने के पश्चात् होता था। अतः बालक इसका आरम्भ साधारणतया 12 वर्ष की आयु में करते थे। अध्ययन की अवधि 12 वर्ष की थी ताकि छात्र प्राचीन परम्परा के अनुसार 25 वर्ष की आयु में किसी व्यवसाय को ग्रहण करके गृहस्थ के रूप में अपना जीवन व्यतीत कर सके। पाठ्यक्रम दो भागों में विभक्त था– धार्मिक और लौकिक धार्मिक पाठ्यक्रम भिक्षुओं और भिक्षुणियों के लिए था। इसका मुख्य उद्देश्य उनको निर्वाण प्राप्त करने और धर्म का प्रचार करने की योग्यता प्रदान करना था उनको धार्मिक और जीवनोपयोगी– दोनों प्रकार की शिक्षा दी जाती थी। मुख्य धार्मिक विषय थे– बौद्ध धर्म, साहित्य, त्रिपिटक, विनय, धम्म आदि जीवनोपयोगी विषयों में मठों और विहारों के निर्माण का व्यावहारिक ज्ञान, दान की सम्पत्ति का प्रबन्ध और हिसाब–किताब आदि सम्मिलित थे।[6]

संस्थाएँ

(1) नालन्दा विश्वविद्यालयः–

यह विश्वविद्यालय पटना से लगभग 50 मील दूर दक्षिण में था। यह लगभग एक मील लम्बा और आधा मील चौड़ा था एवं चहारदीवारी से घिरा हुआ था। इसमें 8 बड़े सभा भवन और 3,000 अध्ययन कक्ष थे। यह विशाल पुस्तकालयी मंजिल का था। इसमें 10 से अधिक सरोवर थे जिनमें छात्र, जल–क्रीड़ा करते थे जब यह अपनी पराकाष्ठा पर था, तब इसमें लगभग1.500 शिक्षक एवं 10,000 छात्र थे और प्रतिदिन 100 भाषण होते थे इसमें चीन, जावा, ब्रह्मा आदि सुदूर देशों के छात्र अध्ययन करने आते थे। इस प्रकार इसने अन्तर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय का रूप ग्रहण कर लिया। सन् 1203 में बख्तियार खिलजी ने प्राचीन भारत की सभ्यता के प्रतीक इस विश्वविद्यालय को धराशायी कर दिया।

(2) तक्षशिला

तक्षशिला ब्राह्मणवादी शिक्षा का एक महत्वपूर्ण केंद्र था। बौद्ध काल में भी इसकी प्रसिद्धि उत्तरी भारत में जारी रही। 5वीं शताब्दी ईस्वी में जब फाह्यान ने तक्षशिला का दौरा किया तो वहां किसी शैक्षणिक केंद्र का कोई नामोनिशान नहीं था। भारत की उत्तर–पश्चिमी सीमा पर अपनी स्थिति के कारण तक्षशिला पर विदेशी आक्रमण का खतरा था। फारसियों, यूनानियों और कुषाणों ने समय–समय पर देश के इस हिस्से में अपना साम्राज्य स्थापित किया। अतः साम्राज्यों के परिवर्तन के साथ–साथ इसकी शिक्षा प्रणाली

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

भी बदलती रही होगी। जैसे–जैसे समय बीतता गया तक्षशिला उत्तर भारत में उच्च शिक्षा के केंद्र के रूप में प्रमुखता से उभरता गया। अनेक विद्वान एवं विद्वान गुरू विद्यार्थियों को शिक्षा प्रदान करते थे। जातकों में उल्लेख मिलता है कि बनारस, मिथिला और राजगृह से विद्यार्थी शिक्षा के लिए तक्षशिला जाते थे। चूंकि तक्षशिला उच्च शिक्षा का केंद्र था, इसलिए छात्र आमतौर पर सोलह वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद वहां जाते थे।

(3) विक्रमशिला

आठवीं शताब्दी में राजा धर्मपाल ने नालंदा के पास मगध में गंगा के तट पर एक पहाड़ी पर विक्रमशिला के विहार की स्थापना की थी। विहार का वास्तुशिल्प डिजाइन अद्वितीय था। यह विहार एक मजबूत दीवार से घिरा हुआ था। केंद्र में महाबोधि की छवियों से सुशोभित एक मंदिर था। इसके अतिरिक्त परिसर में एक सौ आठ से अधिक मंदिर थे। राजा धर्मपाल ने शिक्षण कार्य के उद्देश्य से कई कक्षों की स्थापना की थी और शिक्षकों और विद्यार्थियों के लिए मुफ्त भोजन और जीवन की अन्य आवश्यकताओं की आपूर्ति और रखरखाव के लिए विहार को बड़े अनुदान दिए थे।

(4) वल्लबी

बौद्ध काल में एक अन्य महत्वपूर्ण शिक्षा केंद्र जो 475 ई. से 775 ई. के बीच फला–फूला, वह था वल्लभी। प्रतिष्ठा एवं शैक्षिक महत्व की दृष्टि से वल्लभी को नालन्दा का प्रतिद्वन्द्वी माना जाता था। जब ह्वेन–त्सांग ने शिक्षा के इस केंद्र का दौरा किया, तो वहां कई विहार और मठ मौजूद थे। लेकिन आई–त्सांग ने भारत के पश्चिमी हिस्से में वल्लबी को नालंदा के समान गौरवशाली पाया था और देश के विभिन्न हिस्सों से छात्र वहां शिक्षा के लिए आ रहे थे। अपनी शिक्षा पूरी करने के बाद छात्रों को राजाओं के दरबार में उच्च और जिम्मेदार पदों पर नियुक्त किया जाता था। इससे पता चलता है कि इस केंद्र में धार्मिक शिक्षा पर नहीं बल्कि अर्थशास्त्र, कानून जैसे धर्मनिरपेक्ष विषयों पर अधिक जोर दिया जाता था। राजनीति और चिकित्सा विज्ञान, यह हीनयान बौद्ध धर्म का केंद्र था। शताब्दी ईस्वी तक, वल्लबी ने उच्च शिक्षा के केंद्र के रूप में प्रतिष्ठा अर्जित की।[7]

नव–ब्राह्मणवाद और सीखने के स्थान

बौद्ध धर्म के पतन के निर्णायक मोड़ पर ब्राह्मणवाद का एक नया रूप पुनर्जीवित हुआ और इसे नव–ब्राह्मणवाद कहा गया। नए और पुराने विश्वास के बीच कोई उल्लेखनीय अंतर नहीं था। यह समय की बदली हुई आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए पुराने ब्राह्मणवादी धर्म के पुनरुद्धार के अलावा और कुछ नहीं था। अतः शिक्षा की अवधारणा में अधिक परिवर्तन नहीं हुआ। शिक्षा के तीन उद्देश्य अर्थात् ज्ञान अर्जन, सामाजिक और धार्मिक कर्तव्यों का पालन और चरित्र निर्माण अभी भी कायम हैं। शिक्षा पहले की तुलना में अधिक व्यापक थी और इसने अधिक ठोस और व्यावहारिक पहलुओं को जन्म दिया। शिक्षा केवल ब्राह्मणों तक ही सीमित नहीं थी। समाज की प्रगति के साथ नई जरूरतें और मांगें पैदा हुईं और शिक्षा प्रणाली को समाज की जरूरतों के अनुरूप तैयार किया गया। जैसे–जैसे अधिक लोग शिक्षा चाहते

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

थे, सीखने की कुछ सीटें व्यक्तियों और संगठनों द्वारा एक बड़े क्षेत्र को कवर करते हुए स्थापित की गईं। इस काल में ब्राह्मण काल की कुछ संस्थाओं को नये स्वरूप में पुनर्जीवित किया गया तथा कुछ नयी संस्थाओं को बौद्ध मठों के मॉडल पर विकसित किया गया। 'घट्टिका' बिल्कुल आश्रमों की तरह छोटी संस्थाएँ थीं, जहाँ एक विद्वान शिक्षक अपने अधीन कुछ छात्रों को शिक्षा दे रहा था। विद्यापीठ पुराने गुरुकुलों का पुराना विस्तार थे लेकिन व्यवहार में वे 'मठों' की प्रतिकृति थे।

व्यावसायिक शिक्षा

बौद्ध शिक्षा धर्म–प्रधान थी किन्तु बौद्ध साहित्य में हमको इस बात के पर्याप्त प्रमाण मिलते हैं कि भिक्षुओं और जनसाधारण को व्यावसायिक शिक्षा की अत्युत्तम सुविधाएँ प्राप्त थीं। हम इस शिक्षा के प्रमुख अंगों पर प्रकाश डाल रहे है–

(अ) महावारग में हमें एक स्थान पर इस बात का उल्लेख मिलता है कि बौद्ध काल में भिक्षुओं को अपने मठों में विभिन्न प्रकार के हस्तशिल्पों की शिक्षा प्रदान की जाती थी। जैसे– उनको सूत कातने, कपड़ा बुनने और वस्त्र सीने की शिक्षा दी जाती थी, ताकि वे वस्त्र सम्बन्धी अपनी आवश्यकताओं की स्वयं पूर्ति कर सकें।

(ब) बौद्धधर्म के अनुयायियों और जनसाधारण के लिए अनेक लाभप्रद व्यवसायों की शिक्षा की सुन्दर व्यवस्था थी, ताकि वे अपनी जीविका का सरलता से उपार्जन कर सकें। इस प्रकार के कुछ व्यवसाय थे– कृषि, वाणिज्य, लेखन कला, पशु–पालन और हिसाब–किताब ।

(स) बौद्ध कला में भवन निर्माण कला की विशिष्ट शिक्षा उपलब्ध होने के कारण इस कला का आश्चर्यजनक विकास हुआ। इस कला के बौद्ध बिहार और स्तूप एवं नालन्दा और विक्रमशिला की विशाल इमारतें भवन निर्माण कला की सजीव प्रमाण हैं। इस कला के साथ–साथ मूर्तिकला और चित्रकला की भी शिक्षा की सुविधाओं के कारण, असाधारण प्रगति हुई। अजन्ता और अलोरा के भित्तिचित्र, मूर्तिकला और चित्रकला इस प्रगति के आज भी साक्षी है।

(द) हमें मिलिन्द पान्हा में बौद्ध कला में प्रचलित 19 सिप्याओं अर्थात् शिल्पों का वर्णन मिलता है। इनका सम्बन्ध प्राविधिक और वैज्ञानिक शिक्षा से था। इनमें से अग्रांकित 10 की शिक्षा तक्षशिला में प्रदान की जाती थी–आखेट, चिकित्सा, धनुर्विद्या, इन्द्र जाल हस्ति–ज्ञान, भविष्य कथन, शारीरिक लक्षणों का अर्थ, मृत व्यक्तियों को जीवित करने का मंत्र, सब पशुओं की बोलियाँ समझने का ज्ञान और इन्द्रिय सम्बन्धी सब कार्यों पर नियन्त्रण करने की कला।

(य) बौद्ध–काल में चिकित्सा शास्त्र की शिक्षा का अभूतपूर्व विकास हुआ। इस शिक्षा का मुख्य केन्द्र तक्षशिला विश्वविद्यालय था और इसकी अवधि 7 वर्ष की थी। जीवक, चरक, धन्वन्तरि आदि महान आयुर्वेदाचार्य, बौद्ध युग की ही देन है।[8]

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies

बौद्ध शिक्षा की वर्तमान में प्रासांगिकता

बौद्ध कालीन शिक्षा वर्तमान में भी प्रासंगिक है। बौद्ध कालीन शिक्षा मानव कल्याण हेतु है। बुद्ध ने अपने व्यक्तिगत अनुभव से दुख को पहचान एवं इससे मुक्ति हेतु सही मार्ग बताया। बुद्ध के बताए मार्ग पर चलकर मनुष्य अपने दुखों से मुक्ति पा सकता है। मनुष्य का मनुष्य के प्रति भेदभाव बौद्ध कालीन शिक्षा के माध्यम से दूर किया जा सकता है। बुद्ध का पंचशील मनुष्य को सत्य बोलने व झूठ ना बोलने, किसी स्त्री से व्यभिचार न करने, जीव हत्या न करने तथा मादक पदार्थों से दूर रहने की प्रतिज्ञा करता है। इन प्रतिज्ञाओं का पालन करते हुए व्यक्ति अपने आप को श्रेष्ठ बन सकता है और बुद्ध के बताए आश्टांगिक मार्ग पर चलकर मनुष्य मोक्ष की प्राप्ति कर सकता है। आजकल मनुष्य नैतिक मूल्यों से गिरता जा रहा है, यदि वह बौद्ध कालीन शिक्षा का अनुसरण करें तो अपना, अपने परिवार का तथा समाज का कल्याण करते हुए एक अच्छे समाज का निर्माण कर सकता है। बौद्ध कालीन शिक्षा सभी वर्ग के लोगों के लिए थी। बौद्ध कालीन शिक्षा में मनुष्य का विकास किया जाता था मनुष्य को भिक्षु जीवन तथा भौतिक जीवन के लिए तैयार किया जाता था, जिसका उद्देश्य देश व समाज के कल्याण का कार्य करते हुए अपने जीवन का लक्ष्य प्राप्त कर सके।

निष्कर्ष

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि बौद्ध कालीन शिक्षा व्यवस्था एक आदर्श शिक्षा व्यवस्था थी। बौद्ध शिक्षा में न केवल वर्णगत भेद–भाव का सर्वथा अभाव था बल्कि समाजोपयोगी, व्यवहारिक एवं प्रासांगिक था। वर्तमान भारतीय की नई शिक्षा के अधिकांश योजनाओं में खासकर, चरित्र निर्माण के द्वारा राश्ट्र निर्माण को जोड़ने का जों कार्य किया है, वो बौद्ध शिक्षा से प्रेरित दिखायी पड़ती है

सन्दर्भ सूची

पाण्डेय, वी. के. (2009), प्राचीन भारत का राजनीतिक एवं सांस्कृतिक इतिहास, शारदा पुस्तक भवन पृष्ठ 45।

गौतम, मुकेश कुमार (2018), विश्वशांति एवं सदभाव हेतु शिक्षा, संस्करण 3, अंक–1, फरवरी पृष्ठ 198।

उपाध्यय, आचार्य बलदेव (2014), बौद्ध दर्शन मीमांसा, वाराणसी, चौखम्बा विद्या भवन प्रकाशन।

पाण्डेय, गोविन्द चन्द्र (1990), बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।

डॉ, व्रंदासेन गुप्ता (2016), बौद्वकालीन शिक्षा पद्धति, इनटरनेशनल जर्नल ऑफ एडवांसेज इन सोशल साइंस, अनु पब्लिकेशन, 4 (1)।

डॉ. धर्मकीर्ति (2020), महान बौद्ध दार्शनिक, सम्यक प्रकाशन नई दिल्ली।

आचार्य नरेन्द्रदेव (2017), बौद्धधर्म–दर्शन, मोतीलाल बनारसीदास प्रकाशन, दिल्ली।

एस.एस. गौतम (2022), बुद्ध की शिक्षा, गौतम बुक सेन्टर, दिल्ली।

Copyright © 2024, Scholarly Research Journal for Interdisciplinary Studies